समर्पण

पुरुषों को ब्रह्म से भिन्न मान कर जो कुछ अच्छा बुरा कल्पना कर रखा है न करें। आत्मा मानो बादलों से ढके सूर्य की भाँति है। जैसे बादलों से ढके सूर्य के दर्शन बादलों के हटने तक सुलभ नहीं होते, ठीक इसी तरह अज्ञानता से ढके होने के कारण उस आत्मा के स्वरूप को जानना असंभव है जो परमात्मा का ही रूप है।

उपासना की जान समर्पण और आत्मदान है। यदि यह नहीं तो उपासना निष्फल और प्राण रहित है। जब तक तुम अपनी खुदी और अहं को परमेश्वर के हवाले न करोगे तुम्हारे पास बैठना तो कैसा तुमसे कोसों भागता फिरेगा ईश्वर दर्शन। जब मिलेगा जब सांसारिक दृष्टि से प्रतीयमान वैरी, विरोधी और निन्दित लोगों को क्षमा करते हम इतनी देर लगावें जितना श्री गंगा जी तिनकों के बहा ले जाने में या आलोक की किरणें अंधकार के उड़ाने में लगाती हैं।

अच्छे, बुरे, अमीर, गरीब उस ब्रह्म रूपी समुद्र की तरंगें हैं जिनमें एक ही समुद्र ढाढे मार रहा है। अच्छे बुरे पुरुषों में जब हमारी जीव दृष्टि उठ जाये और हम उन्हें ब्रह्म रूपी समुद्र की तरंगें जान लें तो राग द्वेष की अग्नि बुझ जाएगी।

समुद्र जब स्थिर रहता है तब उसे ब्रह्म कहते हैं। जब उसी समुद्र में लहर उठती है तब वही समुद्र माया कहलाता है। ठीक ऐसे ही जब हमारा मन शांत है तब वही ब्रह्म है। जब इसी मन में तरह-तरह की तरंगें उठती हैं तब यही मन माया का रूप बन जाता है। जो हो न किंतु प्रतिभासित हो वही माया है।

बडप्पन की डींग, दलबंदी एवं ईर्ष्यादि सदा के लिये छोड दो, एवं पृथ्वी की भाँति सहिष्णु हो जाओ। लडकपन की चंचलता और युवापन की गंभीरता दोनों मिलाकर सब के साथ प्रेम से रहो। हृदय को महान बना डालो। क्षुद्र भावों को पार कर जाओ। अमंगल आने पर भी आनंद में मग्न हो जाओ। संसार को एक चित्र की भाँति देखो। जगत में कोई भी तुमको विचलित न कर सकेगा। अहंता को दूर कर दृढता से खडे हो जाओ। काम, काँचन, मान, यश को छोडकर ईश्वर को दृढता से पकड़ो।

दूसरों की सेवा करना शुभ कर्म है। इसी के प्रभाव से चित्त शुद्ध होता है और सब के भीतर बैठे हुए अंतर्यामी भगवान प्रकाशित होते हैं। आदर्श, धार्मिक क्षमा, धृति, शौच, शांति, उपासना और ध्यान का विस्तार ही जीवन और संकीर्णता ही मृत्यु है। जहाँ प्रेम वहीं विस्तार, जहाँ स्वार्थता वहीं संकोच। अतएव प्रेम ही जीवन का एक मात्र आधार है। इसीलिये अवश्य ही सभी से निश्छल प्रेम करना चाहिये। जिस कर्म से मन में धीरे-धीरे ब्रह्मभाव उदय होने में सहायता पहुँचे, वही कर्म उत्तम है।

सदा दाता बनो, अपना सर्वस्व दे डालो परंतु बदले में कुछ भी न चाहो। दूसरों से प्रेम करो, सहायता करो, सेवा करो, और तुमसे जो कुछ भी बने दूसरे के लिये अवश्य करो परंतु सावधान पलटे में कुछ न चाहो। व्यक्तिगत, देशगत, कालगत और कर्म-अकर्म का विचार कर साधन करो। यही सार है।

इदं तीर्थमिदं तीर्थं भ्रामंते तामसा जनाः। आत्म तीर्थं न जानन्ति कथं मोक्ष वरानने।।

यह तीर्थ वह तीर्थ इस तरह से तमो गुणी ही भ्रमण करते हैं। जो आत्मा रूपी सच्चे तीर्थ को नहीं जानते उनके मोक्ष प्राप्त करने का साधन कृपा कर कहिये।

बोलो प्रेम से सच्चिदानंद सनातन ब्रह्म की जय।